# गंगा

प्रो. शेर सिंह बिष्ट

**गंगा**

हिमालय के प्राण-रस से
गिरिमाला के रत्न-गर्भ से
निर्मल धारा दुग्ध-रेखा
तप-पूत धवल गिरिजा
सुमनों की मुस्कान घुला
नन्हीं-नन्हीं ज्यों सहोदरा।
भाव-विभोर हो गले लगा
नृत्यांगना-सी ललित काया
इठलाती, बल खाती धारा
मग विकट, अवरोध हटा
असंख्य मत्स्य सुरबाला
निज आँचल की छाँव सुला
तट-बंधो में बँधी मर्यादा
काल-चक्र की अविरल धारा
जीवन-पथ गतिमान सदा
मंथर-द्रुतगति मदमाता
जड़ चेतन का प्यार भरा
प्राण-सिंचित तृषित धरा
तीर्थस्थल श्रद्धालुओं का
भंडार भरा अर्चनाओं का
मलिन मन के पाप धुलालहरों का आंचल लहर
जीवन का संताप मिटा
भीगे नयनों में अपने
तन-मन की राख लिए
धर्म-अर्थ-मोक्षदा गंगा
महामिलन की आस लिए
आनंद-सागर में गई समा!

**सिकुड़ती नदी**

नदी, नदी वह न रही, बंदिनी-सी अब हो गई,
कृत्रिम कारा में नर की, साड़ी-सी सिकुड़ गई!
उन्मुक्त विहारिणी, खुली हवा को तरसेगी,
मनचाही राहों पर, अब वह न बिचर सकेगी!
हो गई है कठपुतली-सी धरा के मनुजों की,
लतिका-सी देह-यष्टि टुकड़ों में बंट गई!
अस्तित्व शिवि-सा, समष्टि में ही बांट दिया,
सत्व निचोड़, तृषित धरा को पिला दिया!
नव प्राण सींचती, धरा-जीवन के उदरों में,
चांदनी-सी झिलमिलाती, लहलहाते खेतों में!
बाल-बृंद, मवेशी संग कृषक भी हैं झूमते,
खेत-खलिहान हरे, आनंद-राशि बिखेरते!
अल्हड़ शैशव गिरिमाला की छांव में बीता,
प्रकृति मां का ही जहां भरपूर प्यार मिला!
पुष्पों की मुस्कान में, मधुपों के गीत गाती,
पक्षियों के कलरव में, संगीत-सी लहराती!
हरी-भरी वादियों में, झरनों की दुलार में,
बढ़ चली शैलपुत्री, यौवन के सोपानों में!
पुलकित उन्मादिनी, आलिंगन के तटों में,
कुलांचें भर थिरकती, पथ के अवरोधों में!
यौवन की देहरी में, बांध-बंधन में खो गई।,
छूटा बाबुल का घर, लक्ष्मी परायी हो गई!
गृहिणी-सी बंदिनी, बेवशी की तस्वीर बनी,
बुझी काया में, जीवन-दुःख की रेख बनी!
पीकर जीवन-पथ गरल, नीलकंठा हो गई।,
नदी सर्व पापनाशिनी, पाप-पंक में धंस गई!
समुद्र-मंथन का अमृत बांटने ही आई थी,
प्रिय-जलधि में, विषकुंभ संग समा गई!

**गंगा मैया बीमार है**

कर लो जीवन भर पाप
नहा लो गंगा में एक बार
धुल जाएंगे एक ही डुबकी में
जन्म-जन्मान्तर के अंगणित पाप!
नहा लो कुंभ में इस बार
तीर्थराज प्रयाग या हरिद्वार,
उतर जाएंगे कैंचुल जैसे
ऋषियों के शाप, अभिशाप!
नहा गए हैं मुख्यमंत्री पहले ही
शुभ मुहूर्त्त में ढाई बजे रात,
बहाकर दिन-प्रतिदिन के पाप
खासमखास मंत्रिगणों के साथ!
चल पड़े साधु-संतों के उत्साही अखाड़े
ध्वज-पताका फहराते पालकी सवार,
आए हों जैसे देश-देश के भूपति
बनने मां गंगा का हृदय-कंठहार!
'हर-हर गंगे' के जयकारे से

संसार-त्यागी ये अखाड़े सारे
तन-मन का सब मैल बहाने
धर्म की झोली भर ले जाने
बूढ़ी गंगा में नाच-कूद रहे हैं
मातृ-गोद में ज्यों बच्चे उछल रहे हैं!
अब आयी है भीड़ श्रद्धा की धर्मानुरागी
देख नागा बाबाओं को प्रफुल्लित भारी,
लगा रहे डुबकी गंदले जल में बार-बार
हो सकेंगे क्या सभी भवसागर पार?
उमड़ आया है आस्था का जन-समुद्र
हुआ हो ज्यों टिड्डी दल का आक्रमण,
दबेंगे-कुचलेंगे आबाल-वृद्ध, नर-नारी
मचेगा सर्वत्र फिर रूदन-क्रंदन, हाहाकार,
बादल फटने का हो ज्यों अभी इंतजार!
बोलेगा गंगातट का तिलकधारी पंडा
लिए हाथ में धर्म-अधर्म का डंडा
'हो गए धन्य गंगातट पर मरने वाले
पहुंचेंगे सीधे स्वर्ग के द्वार, ये सारे-!
समझता स्वयं को भगवान का दूत
डराता भक्तों को ज्यों कोई यमदूत,
मोक्षद्वार का वह चिर सनातन प्रहरी
या हो देवलोक का कोई दिव्य संतरी!
चली आ रही युगों से दादा-दादी की यही कहानी
बुढ़ियाती संस्कृति-परम्परा की रह गई यही निशानी
बीत भी जाए अहर्निश पापाचारों में जीवन-जवानी
होना न निराश, बचा है गंगा में अभी चुल्लूभर पानी!
पर सावधान! पुरखों की तरह कभी
आचमन न कर बैठना भूलकर भी,
स्वर्ग सीधे ही पलभर में पहुंच जाओगे!
गंगा स्नान का फल तुरन्त पा जाओगे
है देवसुता गंगा जग में सबसे न्यारी
पापनाशिनी-जीवनदायिनी सबको प्यारी,
दुग्ध-धवल गंगाजल पीते थे पुरखे कभी
सहेजते थे बर्तनों में मोक्षदायी गंगाजल ही,
रहता था स्वर्णवत् निर्विकार वर्षों तक भी!
कहा था किसी भक्त कवि ने-
'मन चंगा तो कठौती में गंगा',
कठौती ही बना दी है भक्तों ने
सागर-पुत्रतारिणी भागीरथी गंगा!
क्षुद्र स्वार्थपूरित अविवेकी विकास के
विषैले गंदे नाले आधुनिक सभ्यता के
अहर्निश गंगा में सब ज़हर जब घोलते
मां को पूजा में क्या उपहार यही हम देते?
पारस-स्पर्श से गंगा के पापी नाला तो तर गया,
गंगास्नानी तीर्थयात्री आचमन से वंचित रह गया!
लगाओ डुबकी गंगा में, बोतल-कमण्डल भर लाओ
शुद्धिकर्ता गंगाजल से बच्चों को अपने अवश्य बचाओ!
सुनो वक्त की पुकार, हे कलजुगी गंगा-भक्तों!
पूजन-अर्चन से पहले गंगा को पीने योग्य बनाओ!

'हर-हर गंगे' के जयकारे से गंगा नहीं बच पाएगी,
कूड़े-कचरे के जहर से गंगा असमय ही मर जाएगी!
घुट रहा है दम गंगा का शवों के दहकते अंगारों से
फट रहा है हृदय उसका तैरती लाशों की चीखों से,
पी सकेगी कब तक गंगा उद्योगों के विषैले रसायनों को
सह पाएगी कब तक सुरसरिता मल-मूत्र के फव्वारों को?

**वर्षा और बाढ़**

सूर्य का गोला जब दहकता है
हृदय सागर का तपता है
बादलों के पहाड़ उपजते हैं
झर-झर धरा पर झरते हैं
मन के झरनें बहते हैं,
बाढ़ें प्रलयंकर आती हैं
तबाही का मंजर लाती हैं!
अतिवृष्टि का तांडव नर्तन
तोड़ डालता है तट-बंधन,
बहते हैं गांव-खेत-डगर,
बहते हैं झोपड़ियों के शहर
लिपटकर कीचड़ के कफन में
गूदड़ को अपने समेटकर!
अच्छा लगता है शहरियों को
धन्यवाद इन्द्रदेवता का
कम हुई। कुछ तो गंदगी,
ऋतु परिवर्तन हो जाएगा!
खड़ा हो जाएगा वहां दैत्याकार
मल्टीनेशनल का विशाल मेगामार्ट!
नहीं होगा कभी कम
सुरसाकार जनसंख्या का भार,
जमा हो जाएगा फिर इर्द-गिर्द
झुग्गी झोपड़ियों का कचरा सारा
महानगरों की पथरीली छाती पर
ज्यों चन्द्रमा का काला दाग!
हम चाहते हैं
एक आदर्श स्थिति
वर्षा हो उतनी ही
रिमझिम बूंदों से सहलाती
झिलमिलाती-गुदगुदाती
जो न लाए बाढ़ कहीं,
लहलहाए फसल खेतों में
भरें अन्न के भंडार घरों में
बहे न कोई घर-आंगन
रहें गांव-शहर सभी मगन!
प्यासे ही रह जाएंगे तब बांध
दिखने लगेंगी नहरों की हड्डियां,
झुलसाएंगे ग्रीष्म के दहकते अंगारे
मुरझाएंगे खेत ठिठुरते शीत से!
प्रकृति के अटल विधान को
रोक सकता नहीं कोई,
सोचते रहें हम कुछ भी
नियत है जो, होगा वही!

*संपर्क करें*
**प्रो. शेरसिंह बिष्ट**
**कुमाऊँ विश्वविद्यालय, एस.एस.जे. परिसर**
**अल्मोड़ा-263 601, उत्तराखंड**
**मो. नं. 09719595076**
**ईमेल : shersinghbisht@gmail.com**